Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 2, February-2019, ISSN 2230-7540

हरियाणवी सांग परंपरा के प्रमुख लोक गायक

Sunil Kumar*

Research Scholar, Department of Hindi, NIILM University, Kaithal, Haryana

सार – ***संगीतक, सांग या स्वांग को हरियाणा का कोमी नाट्य कहा जा सकता है। जनरंजनकारी यह विधा हरियाणा के लोकमानस पर जादू का प्रभाव डालती है। इसके मंच के चारों ओर बैठे दर्शक रागनियों की स्वर-लहरियों में एवं वाद्य संगीत कथा को देखसुन कर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं यदि हम इसके नाम के ऊपर चर्चा करें तो हमें विभिन्न विद्वानों के द्वारा उनके अनेक नाम प्राप्त होते हैं। डॉ शंकर लाल यादव सांग या सांगीत को संगीत का ही फूहड़ रूप मानते हैं।[1]***

----------X----------

श्री राम नारायण अग्रवाल का मत है कि स्वांग का एक नाटक रूप उत्तर मध्यकाल में उत्तर तथा मध्य भारत में ख्याल के नाम से विकसित हुआ था और उसी ने पंजाब में ख्याल, राजस्थान में तुर्रा कलगी, मालवे में मांच तथा ब्रज क्षेत्र में भगत और हरियाणा तथा मेरठ में सांग के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की।[2]

श्री जगदीश चंद्र माथुर इसका प्राचीनतम नाम संगीतक मानते हैं उनकी धारणा है कि संगीतक ही बाद में सांगीत या सांग बन गया।[3]

डॉ इंदर सेन शर्मा सांग को निश्चित रूप से संस्कृत के स्वांग शब्द का ही विकसित रूप मानते हैं ।[4]

इस प्रकार हम पाते हैं कि विभिन्न विद्वानों ने समय-समय पर सांग के लिए अनेक शब्दों का प्रयोग किया है तथा प्राचीन परंपराओं के द्वारा उसको स्पष्ट करने की का प्रयास किया है। आरंभ में सांग के लिए चाहे जो भी शब्द प्रयुक्त होता हो परंतु कालांतर में जाकर इन सब में सांग शब्द ही ज्यादा प्रसिद्ध हो गया, यदि हम इतिहास पर नजर डालें तो हम पाते हैं, संगीतक के सिद्धों व नाथों के समय के अन्य नाम सांग या स्वांग का प्रचलन भी हो गया था।इस तथ्य का उल्लेख आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास में इस प्रकार दिया है-

"आलो डोंवि तोय सस करिव म सांग।

निधिण कण्ह कपाली जोई लाग ।"[5]

डॉ श्याम परमार का कथन की गोरखनाथ के समय भी सांग का प्रचलन था क्योंकि उनकी वाणी में इसका उल्लेख मिलता है-

"अरे ससरो संवांगी जो संग भयो,पांची देवर त्हारी लार।

घट म ससे आ नंदल मोहेली, ते कारण छोडयो भरतार।।"[6]

संत कबीर के समय भी स्वांग अत्यंत आकर्षक रूप में होते थे। कथा कीर्तन को छोड़कर लोग स्वांग पर लट्टू रहते थे तभी तो कबीर को झुंझला कर कहना पड़ा-

"कथा होय तहं श्रोता सोवै, वक्ता मुंड पचाया रे ।

होय जहां कहीं स्वांग तमाशा तनिक न नींद सताया रे"[7]

इस प्रकार हम पाते हैं कि सांग काफी समय से विभिन्न नामों और रूपों में प्रचलित रहे हैं। समय के साथ साथ इसमें थोड़ा बहुत परिवर्तन होता रहा और आगे चलकर यह सांग के रूप में ही प्रसिद्ध हो गया।कुछ विद्वान तो यह भी मानते हैं हिंदी नाटक की उत्पत्ति और विकास का विवरण स्वांग परंपरा के अनुसंधान के बिना अपूर्ण ही माना जाएगा।आगे चलकर 1750 के आसपास किशन लाल भाट ने आधुनिक सांगों की रचना की और लोगों के सामने प्रस्तुत किया।

किशन लाल भाटः श्री राजाराम शास्त्री ने 1958 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'हरियाणा लोक मंच की कहानियां' में लिखा कि लगभग सवा दो सौ वर्ष पूर्व जिस ज्योति को किशन लाल भाट ने प्रज्वलित किया,एक सौ सतर वर्ष बाद उसी में पंडित दीपचंद ने स्वरूप परिवर्तन किया। आरंभ में स्वांग का स्वरूप

www.ignited.in

मुजरे सरीखा था। नायक नायिका आदि मंच पर खड़े होकर अपना-अपना अभिनय करते थे और सारंगी और ढोलक वाले उनके पीछे घूम-घूमकर साज बजाते थे ।

पंडित मांगेराम की रागनी में सांग परंपरा, अभिनय, मंच, वाद्यों एवं वेशभूषा का समीक्षात्मक परिचय इस प्रकार दिया गया है-

"हरियाणा की कहानी सुण ल्यो दो सौ साल की।

कई किसम की हवा चाली नई चाल की।

एक ढोलकिया एक सारंगिया खड़े रहै थे।

एक जनाना एक मर्दाना दो अड़े रहैं थे। एक सौ सतर साल बाद फेर दीपचंद होग्या

साजिण्दे तो बणा दिए ओ घोड़े का नाच बंद होग्या

चमोला को भूल गए यू न्यारा छंद होग्या।"[8]

उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 1750 ईस्वी के आसपास हरियाणा में किशन लाल भाट ने इस कला का वर्णन किया होगा।

बंसीलालः किशन लाल भाट के बाद सांग को संजीवनी प्रदान करने वाले बंसीलाल का समय 1800 ई० सन माना गया है। इन्होंने मुख्य रूप से 3 संगो की रचना की उनके नाम इस प्रकार हैं। गुरु गुग्गा, राजा गोपीचंद तथा राजा नल। बंसीलाल के बाद अंबाराम ने सांगों के क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में सांग कला को अलीबख्श की प्रतिभा का संबल मिला। इनके सांगों की धूम हरियाणा, मेरठ और मेवाड़ में खूब मची।इनके साथ ही समकालीन बालकराम, अहमदबख्स, नेतराम और रामलाल ने भी सांग कला में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया। नेतराम के गुरु शंकर दास नहीं चाहते थे कि पंडित नेतराम सांग करें क्योंकि सभ्य समाज में इसे अश्लील समझा जाता था।

दीपचंदः 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में हरियाणा के सांग मंच पर एक प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व का प्रादुर्भाव हुआ जिन्हें पंडित दीपचंद के नाम से जाना जाता है। ऐसा कहा जाता है की प्रथम विश्व युद्ध के समय सेना में जब जवानों की आवश्यकता पड़ी तो सरकार ने इन से अनुरोध किया और उन्होंने अपने सांगो के माध्यम से हरियाणा में यह जादू भरे शब्द युवाओं के मन में भरे-

"भरती होल्यो रै थारै बाहर खड़े रंगरूट

इत राखो मधम बाणां अर मिल्लै फट्या पुराणा

उत मिल्लैगा फुलबूट।"[9]

बाजे भगतः हरदेवा के शिष्य बाजे नाई की भी प्रसिद्धि हरियाणा में खूब फैली।बाजे भगत ने अपनी रंग भरी रागनियों से हरियाणा के जनमानस को बीन बजाने वाले सपेरे की तरह मंत्र-कीलित कर दिया। उनके सांगों में श्रंगार की गहरी छाप होती थी।

"बाजे कह कर ठंडा सीना,लाग्या सामण किसा महीना।

नाचै नै बणके मोर मोरणी आंसू चाहवै सै।।"[10]

इनके प्रमुख सांग है चंद किरण, जमाल और जानी चोर।

पंडित लख्मीचंदः हरियाणा के सांग साहित्य को यदि किसी ने चरम पर पहुंचाया और इस कला के सूर्य कहे जाते हैं,उनका नाम है पंडित लख्मीचंद।यहाँ इनको सांग शिरोमणी कहा जाता है।इनके आरंभिक सांगों में श्रंगार रस की प्रधानता रही परंतु धीरे-धीरे अपने गुरु मान सिंह के प्रभाव के कारण धार्मिक व पौराणिक सांगों की रचना की। भाव -भाषा कला - कौशल सभी दृष्टि से अद्वितीय थे। उनके अभिनय उत्कर्ष का उल्लेख पंडित मांगेराम ने इस प्रकार किया है-

"लख्मीचंद नै मार गेरे जब लकड़हारा गावण लाग्या।

बहुत सी दुनिया पाछै रहगी नए-नए सांग बणावण लाग्या

लख्मीचंद का माई चन्द था काट बैल सी हाल्या करता

बागां मैं नौटंकी बण के खटोले से साल्या करता

आगै-आगै नौटंकी फेर पाछै बामण चाल्या करता

लख्मीचंद माली की बणके बांध्या करता साड़ी।"[11]

पंडित मांगेराम: पंडित मांगेराम लख्मीचंद के शिष्य एवं समकालीन थे।वे लख्मीचंद से प्रभावित होकर उनके शिष्य बन गये । उन्होंने स्वयं कहां है-

"पहले मोटरकार चलाई,फेर सांग सीख लिया लख्मीचंद के डेरे मैं ।

गैरां के दुख दूर करूं सूं या ताकत सै मेरे मैं ।।"[12]

www.ignited.in

उनके सांगों के मूल में भक्ति भावना, धर्म और ज्ञान का मार्ग रहा है। ऐसे सांगों की रचना ये करना चाहते थे,जिनको बाप और बेटी इकट्ठे बैठकर देख सकते हो। श्रृंगार और वीर रस का वर्णन अनुषांगिक रूप में हुआ है। पंडित मांगेराम ने सामयिकता एवं सुविधा अनुकूल अपने सांगों में स्त्री पात्रों को जम्पर तथा सलवार पहनाई, जिसकी जनता ने भूरी भूरी प्रशंसा की ।इस प्रकार हम देखते हैं कि सांगों का विकास काफी लंबे समय से चला आ रहा है और उनकी प्रसिद्धि आज भी बनी हुई है। यह हरियाणवी समाज के लोक मानस के निकट है और कहीं न कहीं हरियाणवी लोग अपने आप को इन से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।

हरियाणवी संस्कृति को इन सभी सांगियों ने अपने सांगों से माध्यम से अभिव्यक्त किया और हरियाणा समाज के मनोरंजन के माध्यम से लोकप्रद शिक्षाओं का प्रचार प्रसार भी किया। इसमें इन सभी का अमूल्य योगदान रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृ. 98, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
2. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ 98, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
3. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ98, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
4. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ98, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
5. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ101, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
6. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ101, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
7. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ101, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
8. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ103, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
9. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ109, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
10. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ111, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
11. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ112-113, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।
12. डॉ पूर्ण चन्द शर्मा, पंडित मांगेराम ग्रंथावली, पृष्ठ 113, हरियाणा ग्रंथ अकदामी, पंचकूला।

Corresponding Author

Sunil Kumar*

Research Scholar, Department of Hindi, NIILM University, Kaithal, Haryana

chhikara.sunil@ymail.com